International Journal of Applied Research 2021; 7(8): 350-352

ISSN Print: 2394-7500
ISSN Online: 2394-5869
Impact Factor: 8.4
IJAR 2021; 7(8): 350-352
www.allresearchjournal.com
Received: 19-06-2021
Accepted: 21-07-2021

डॉ. पद्म लोचन पटेल
प्राचार्य, बटमूल आश्रम महाविद्यालय, महापल्ली, जिला रायगढ, छत्तीसगढ, भारत

Corresponding Author:
डॉ. पद्म लोचन पटेल
प्राचार्य, बटमूल आश्रम महाविद्यालय, महापल्ली, जिला रायगढ, छत्तीसगढ, भारत

पृथ्वी से मानव का मिटता 'अस्तित्व'

डॉ. पद्म लोचन पटेल

सारांश
वातावरण का सर्वाधिक प्रभावकारी एवं महत्वपूर्ण कारक मनुष्य का अस्तित्व आज उसके स्वयं के अनियंत्रित और भोग–विलास युक्त जीवन शैली के परिणाम स्वरुप संकट में है। जिसको समयानुकुल नियंत्रित कर पारिस्थितिकी के साथ सामंजस्य स्थापित करना आवयष्क हो जाता है। सामंजस्य के अभाव में दीर्घकाल में प्रजातिगत समस्याओं का सामना करना पड़ सकता है। अस्तु यह शोध वर्तमान परिस्थिति में आवश्यक है।

कूटशब्द : अस्तित्व, दहन, प्रजातिगत, गुणहीन।

प्रस्तावनाः
इसका उल्लेख करते हुए गैलिलियो (1564 ई. से 1642 ई.) के समयावधि की बात बार–बार याद आ रही है कि जो बात आज वैज्ञानिक दृष्टिकोण से पूर्णतः सत्य है उसे उस समय असत्य एवं अपराध समझा जाता था। जब गैलिलियो द्वारा दृढ़ता पूर्वक यह कहा गया कि ''पृथ्वी सूर्य का चक्कर लगाती है तथा वह ब्रम्हाण्ड का केन्द्र नहीं है'' तब उसे अपराधी बनकर जेल तक की यातना सहनी पड़ी। तो क्या आज की परिस्थिति में ऐसी लेखों का उल्लेख कहीं वैसी स्थिति निर्मित ना कर दे। खैर जो भी हो परिणाम की चिंता किये बिना इस बात को स्पष्ट करेंगे कि आखिर आज मानव का अस्तित्व पृथ्वी से मिटता जा रहा है। ..... कैसे –

यहां सर्वप्रथम अस्तित्व शब्द का आशय सुनिश्चित करना आवश्यक है नहीं तो भ्रमित या द्विअर्थी हो जाएगा। भ्रमित या द्विअर्थी दोनों ही स्थिति घातक की स्थिति होती है। यहां अस्तित्व मिटना अर्थात् पूर्णतः समाप्त होना जिसमें उसका कोई भी अवशेष ना रह पाए। विज्ञान की भाषा में कहें तो जीवाश्महीन होना है। तो क्या इस अर्थ से, शीर्षकानुसार यह मान ले कि कालांतर में कभी मानव का अस्तित्व अर्थात् जीवाश्म पृथ्वी से या भूतल से मिट जाएगा। जिसे भावी पीढ़ी नहीं जान पाएगी की कभी इस पृथ्वी पर पांच–छः फूट ऊंचाई, दो ढाई फूट मोटाई, दो–दो हाथ–पैर, दो कान, दो आंख, एक नाक, एक गोलाकार बाल युक्त सिर जिसमें कान एवं नाक तल से बाहर निकले हुए, हाथ पैर में पांच–पांच नाखूनदार उंगलियों के लक्षण वाले स्तनधारी प्राणी अपना जीवन चक्र चलाता था। क्या वास्तव में आज की परिस्थितियां कुछ ऐसी निर्मित हो गयी है या हो रही है जिसमें मानव जीवाश्महीन हो जाएगा। आइये यदि हो गई हो तो उसे बंद करने का और हो रही होगी तो रोकने का प्रयास करेंगे। ..... कैसे

जीवाश्महीन होना एक दीर्घकालीन प्रक्रिया का परिणाम है जो मानव के क्रिया–कलाप एवं सूझ–बूझ पर ही निर्भर है। यहां पृथ्वी कहें या भूतल या पर्यावरण जो भी कहें इसका संचालन एक चक्रीय व्यवस्था से संचालित है जिसे हम सब भिज्ञ है। इसी क्रम में मानव की उत्पत्ति भी चक्रीय व्यवस्था में हुई जिसे हम भूवैज्ञानिक समय मापनी (Geological Time Scale) द्वारा जाने हैं। साथ ही यह भी जाने कि मानव इस भूतल या पृथ्वी की प्रथम प्राणी नहीं है इससे पहले अनगिनत `प्राणियों की उत्पत्ति हो चुकी थी तब फिर मानव की उत्पत्ति हुई। पृथ्वी पर मानव उत्पत्ति के सुनिश्चित समयावधि बतलाना कठिन है अपितु भूवैज्ञानिक समय मापनी के अनुसार वर्तमान से लगभग 6.5 करोड़ वर्ष पूर्व नवजीवी कल्प (Kainozoic Era) के प्रारम्भिक चरण टर्शरी युग के ओलीगोसीन काल में पुंछ वाले वानर रूप में हुई माना जाता है। परन्तु आज तो मानव के परिवर्तित रूप है जिससे यह लगता है कि कालांतर में मानव शरीर और परिवर्तित हो सकता है। पृथ्वी पर मानव उत्पत्ति के पहले एवं बाद में अनगिनत प्राणी आते गये और अपना–अपना जीवन चक्र चलाकर भूपटल में भूमिगत होते गये। इससे भूपटल में जैवविविधता (Bio-Diversity) विकसित होकर परिस्थितिकी तंत्र संचालित हुई। यहां भूतल पर जिन प्राणियों की उत्पत्ति मानव के बाद हुई उन प्राणियों को मानव अपने सहजीवी मानकर उनके साथ मिल जुलकर जीवनयापन करते हुए धीरे–धीरे अपना शारीरिक एवं मानसिक विकास किया।

परन्तु जिन प्राणियों की उत्पत्ति मानव उत्पत्ति के पूर्व हो चुकी थी और भूपटल से हट भी चुके थे उनको मानव अपने विकसित ज्ञान को प्रयोग कर विज्ञान (Science) द्वारा जीवश्म (Fossil) के तहत जानने लगा और आज भी जान रहा है। जैसे –

डायनोसोर का अस्तित्व इस पृथ्वी पर है लेकिन उसे किसी मानव ने नहीं देखा है क्योंकि वह मानव से लगभग सात करोड़ वर्ष पूर्व जुरासिक युग में अपना जीवन चक्र चलाता था। उसके आकार–प्रकार के संबंध में बताया जाता है कि वह अपने समकालीन स्थलीय प्राणियों में वृहद आकार वाला प्राणी था। कालांतर में वह पृथ्वी के प्रतिकूल परिस्थिति (जलवायु) के कारण शारीरिक रूप से सामाप्त हो गया अपितु अपना अस्तित्व जीवाश्म के रूप में छोड़ गया जिसके कारण मानव उसे आज भी जानता है। तो क्या कभी ऐसा भी समय आ सकता है जिसमें मानव डायनासोर की तरह पृथ्वी से समाप्त होकर अपना अस्तित्व केवल जीवाश्म के रूप में ही छोड़ जाएगा ..... नहीं, मानव आज तो विकास के नाम पर अपने अस्तित्व को ही मिटाने जा रहा है। डायनोसोर का तो अपना शरीर ही समाप्त हुआ, उसका अस्तित्व तो जीवाश्म के रूप में आज भी सुरक्षित है। तो क्या कभी पृथ्वी पर पुनः प्रतिकूल परिस्थिति निर्मित हो जाता है तो भूतल से मानव का शारीरिक रूप डायनोसोर की भांति समाप्त हो जाएगा। ..... इसके उत्तर को मैं आपकी समझ पर छोड़ता हूँ। परन्तु यहां यह मानले कि कभी कालांतर में भूतल के प्रतिकूल परिस्थिति से मानव का शारीरिक रूप डायनोसोर की भांति समाप्त होता है तो मानव का अस्तित्व डायनोसोर की भांति जीवाश्म के रूप में भावी पीढ़ी के अध्ययन हेतु नहीं बचेगा। तो क्या सच में कालांतर में मानव का अस्तित्व जीवाश्म के रूप में भी नहीं बच पाएगा। यदि हां तो कैसे और क्यों –

आज मानव विज्ञान के सहारे विकास के नाम पर विनाश को आमंत्रित कर रहा है उसे पता नहीं कि उसके द्वारा किये जा रहे अनियोजित एवं अनियंत्रित कार्य एक दिन उसके अस्तित्व को ही मिटा देगा। मानव को आज ऐसी कार्यों को करने से समय पूर्व उसे सचेत कराना आवश्यक है। पर मानव मानेगा या नहीं ये उसकी समझदारी है। तो वह कौन सी ऐसी कार्य या कारण है जिससे मानव करके अपने अस्तित्व को मिटाने चला है। इसका उत्तर है 'दहन या आग'। .....कैसे –

यहां पृथ्वी को ही नहीं वरन् सम्पूर्ण ब्रम्हाण्ड को नियंत्रित, संचालित एवं परिवर्तित करने वाली यदि कोई शक्ति है तो वह है 'आग अर्थात् ताप' । आग को भौतिक दृष्टि से ताप के नाम से जाना जाता है। भौतिक ताप को नियंत्रित कर मानव उसे आग की संज्ञा दी है। मानव सभ्यता के विकास में आग के नियंत्रण उसकी सबसे बड़ी उपलब्धि है। मानव अपने चहुमुखी विकास में आग को आगे रखकर प्रकृति (Environment) को स्वामी से दास बना लिया। तब फिर आग से मानव अस्तित्व को खतरा। ..... कैसे –

आधुनिक मानव आधुनिकीकरण से वशीभूत होकर मृगतृष्णा की भांति विनाश को विकास समझ कर दौड़ लगा रहा है। वह अपनी धर्म संस्कृति एवं रीति–रिवाज को भूल कर ऐसे कार्यों में लिप्त होते जा रहा है जिसे मानव को नहीं करना चाहिए। आज मानव साफ–सफाई, सुविधा एवं विकास के नाम पर पृथ्वी या पर्यावरण के जैविक तत्वों को आग से जलाने लगा है। यहां तक कि मृत मानव शरीर को भी दाह संस्कार के रूप में जलाने लगा है। पर्यावरण का यह अटूट सत्य है कि किसी भी वस्तु (जैविक या अजैविक) को जलाने या तपाने से उसका गुण नष्ट हो जाता है। तब फिर मृत मानव शरीर को जलाने से उसका जीवाश्म बच पाएगा ..... नहीं। प्राचीन ऋषि मुनी एवं ज्ञानी पुरूषों ने अथक प्रयास (शोध) से जो रीति नीति प्रकृति एवं मानव के लिए बनाये उसे धर्म एवं ग्रंथ के रूप में प्रस्तुत किये जिसको मानव आज अनदेखा कर विकास–विकास कहते आगे बढ़ रहा है। मानव समुदाय के सभी धर्मों में मृत शरीर को दफनाने (जमीन में गाड़ने) की प्रथा या संस्कार बनाई गई थी और उसे अपनाई भी जा रही थी। परन्तु जैसे–जैसे मानव में आधुनिकीकरण से Short & Sweet का भाव आने लगा दफन दाह में परिवर्तित हो गयी। और अब सभी एक दूसरे को देखकर धीरे–धीरे दफनाने के स्थान पर दाह संस्कार करने लगे हैं। वर्तमान समय में इस दाह संस्कार को शासन–प्रशासन द्वारा भी प्रोत्साहन मिलने लगा है। प्रशासनिक संस्थाओं एवं चिकित्सालयों में धीरे–धीरे इलेक्ट्रिक हीटरों वाली आधुनिक व्यवस्था भी होने लगी है। कुछ धर्मों में अभी भी दफन करने की प्रथा सुरक्षित है परन्तु धीरे–धीरे बाद में उन पर भी आधुनिकता का प्रभाव पड़ सकता है। इस तरह एक समय ऐसा भी हो सकता है कि सम्पूर्ण मानव समुदाय दाह संस्कार के रूप में मृत मानव शरीर को जलाने लगेगा वह भूल जाएगा की मृत शरीर को दफनाया जाता था।

आधुनिक युग में दाह संस्कार के विकसित रूप को देखने से ऐसा लगता है कि कालांतर में एक भी मृत मानव शरीर भूमिगत नहीं होगा और ना ही जीवाश्म निर्मित होगा। इस प्रकार मानव का अवशेष जीवाश्म के रूप में कब तक का नहीं होगा इसे सुनिश्चित कह पाना कठिन है अपितु यह कहा जा सकता है कि दाह करने की प्रवृति जब से जब तक चली और चलती रहेगी तब से तब तक मानव का जीवाश्म भूतल से अप्राप्त होगा। अंततः कहा जा सकता है कि जिस का दाह हुआ उसका अस्तित्व खत्म हुआ।

कोई भी तत्व मृत तब कहलाता है जब वह क्रियाहीन हो जाता है अर्थात् क्रियाहीन तत्त्व मृत कहलाता है। परन्तु मृत तत्त्व क्रियाहीन होता है गुणहीन नहीं। जैसे – जीव जन्तु एवं वनस्पति मृत होकर औषधि बनते हैं। ऐसी ही मृत मानव क्रियाहीन होता है गुणहीन नहीं। परन्तु उसे दाह कर गुणहीन (अस्तित्वहीन) या जीवाश्म हीन बना दिया जाता है। इन्हीं सब बातों को समझकर प्राचीन ज्ञानी पुरूषों ने कहा है कि आत्मा (अस्तित्व/जीवाश्म/गुण) कभी नहीं मरती। शायद उस समय मृत जैविक तत्त्वों का दहन या दाह संस्कार नहीं किया जाता रहा होगा, यदि उनके समय भी दाह संस्कार की प्रथा चल रहा होता तो कभी नहीं कहते कि आत्मा नहीं मरती।

आज दाह संस्कार या दाह कार्य की समस्या एक ऐसी समस्या है जो वर्तमान की समस्या नहीं अपितु भविष्य की समस्या है, व्यक्तिगत समस्या नहीं अपितु प्रजातिगत समस्या है, मानव की ही समस्या नहीं अपितु जैवविविधता की समस्या है, पारिवारिक समस्या नहीं अपितु पर्यावरणीय समस्या है, राष्ट्रीय समस्या नहीं अपितु अंतर्राष्ट्रीय समस्या है।

इस गंभीर समस्या के एक ही उपाय कि इसके लिए किसी को, किसी भी प्रकार के, किसी भी रूप में प्रोत्साहन न मिले और दूसरों से नहीं बल्कि अपनों से ही प्रेम पूर्वक अपील करें कि –

''मुझे दहन मत करना''

सन्दर्भ सूची

1. श्री पी. एस. नेगी, (1995), पारिस्थितिकीय विकास एवं पर्यावरण भूगोल, रस्तोगी एण्ड कम्पनी, मेरठ।
2. डॉ. सविन्द्र सिंह, (2001), पर्यावरण भूगोल, प्रयाग पुस्तक भवन, इलाहाबाद।
3. डॉ. डी.पी. गर्ग, (1997) पर्यावरण प्रदूषण नियत्रंण, नारायण प्रकाषन, इंदौर।
4. डॉ.चतुर्भुज मामोरिया, (2000), भारत का भूगोल, साहित्य भवन पब्लिकेषन्स आगरा।
5. डॉ. जे.एन. पाण्डेय एवं डॉ. एस. आर. कमलेष, (1998) कृषि भूगोल, वसुन्धरा प्रकाषन गोरखपुर।
6. डॉ. बी.पी. पण्डा, (1989), जनसंख्या भूगोल, म.प्र. हिन्दी ग्रन्थ अकॉदमी, भोपाल।
7. डॉ. लक्ष्मण सिह खन्ना, (1992), वन वर्धन, खन्ना वन्धु,तिलक मार्ग देहरादून।

8. डॉ. वी. के. सिंह, (2000), जन्तु विज्ञान, षिवलाल अग्रवाल एन्ड कम्पनी, इंदौर।
9. डॉ. एस.बी.अग्रवाल, (2000), वनस्पती विज्ञान, षिवलाल अग्रवाल एन्ड कम्पनी, इंदौर।
10. डॉ. प्रमीला कुमार एवं डॉ. कमल शर्मा, (2000) कृषि भूगोल, म.प्र. हिन्दी ग्रन्थ अकॉदमी, भोपाल।
11. डॉ. एस. सी.सक्सेना, (2000), प्रबन्ध के सिद्वांत, साहित्य भवन पब्लिकेषन्स आगरा।
12. डॉ. जगदीष सिंह, (2000), संसाधन भूगोल, ज्ञानोदय प्रकाषन गोरखपुर।
13. विकिपीडिया – गूगल